भारतीय कला में पुराण-कथाएं

प्रो. कृष्णदत्त वाजपेयी

पुराण कथाओं (मिथको) की परंपरा बहुत पुरानी है। भारत तथा अन्य प्राचीन देशों के साहित्य तथा पुरातत्वीय अवशेषों में इस परंपरा को देखा जा सकता है। सभ्यता की आदिम अवस्था में भौगोलिक स्थिति तथा रहन-सहन की प्रणाली ने अनेक भावनाओं का सृजन किया। ये भावनाएं धीरे-धीरे मान्यताओं या आस्थाओं के रूप में परिणित हुईं और वे लोगों के जीवन को प्रभावित करने लगीं। कतिपय धार्मिक विश्वासों ने कालांतर में दृढ़ता प्राप्त की और उनके आधार पर देव या पुराण कथाओं का सृजन हुआ। इन मिथकों में प्रत्यक्ष से कहीं अधिक कल्पना मुखरित हुई उसमें ऐहिक तथा पारलौकिक जीवन के प्रति लोगों की विचारधारा को प्रभावित किया।

भारतीय वैदिक एवं अवैदिक साहित्य में अनेक मिथकों की चर्चा मिलती है। उन्हें पुराणों में अधिक व्यापकता दी गई और अनेक रूपों में उनकी व्याख्या की गयी। पौराणिक साहित्य को पढ़ने से पता चलता है कि लोगों की दैनिक चर्या और विचारधारा में पुराण कथाओं ने प्रभावशाली स्थान बना लिया। भारतीय समाज के विकास के साथ ये मिथक भी पुष्ट होते गए। वैदिक, पौराणिक, जैन, बौद्ध आदि विचारधाराओं में अनेक मिथकों को केवल स्वीकारा ही नहीं गया अपितु उनके आधार पर अपने धर्मों को प्रचारित-प्रसारित करने की विधियां ढूंढ ली गयी।

साहित्य के अतिरिक्त लोक कला की अनेक विधाओं--यथा मूर्तियों, चित्रों, गीतों और नाटकों में भी इन मिथकों को रूपांकित किया गया। भारतीय कला में देवी-देवताओं तथा उनसे संबंधित कथाओं को हम प्रचुर रूप में अंकित पाते हैं। कला को लोकरंजनी बनाने के लिए यह बहुत आवश्यक था। पूज्य देवों के अतिरिक्त यक्ष, किन्नर, गंधर्व, सुपर्ण, अप्सराओं आदि का चित्रण लोक कला में बहुत मिलता है। भारत की अनेक प्राचीन कलाकृतियों में विविध धार्मिक क्रियाओं एवं त्यौहारों में उत्साह के साथ भाग लेते हुए स्त्री-पुरुष दिखाए गए हैं। अनेक लोकप्रिय पौराणिक कथाओं को मूर्तियों तथा चित्रों के माध्यम से उरेहने की परंपरा आज तक इस देश में जीवित है।

लोक कला का सर्व सुलभ माध्यम मिट्टी की मूर्तियां एवं खिलौने थे। भारत में सबसे पुरानी मूर्तियां हाथ से गढ़ी हुई मिली हैं। सांचे का प्रयोग उनमें नहीं हुआ। हाथ से गढ़कर बनायी गयी मूर्तियों में मातृदेवी की प्रतिमायें बड़े महत्व की हैं। भूमि को माता के रूप में मानने की भावना वेदों तथा इतर साहित्य में मिलती है। मातृदेवी या महीमाता की ये मूर्तियां उसी भावना को अभिव्यक्त करती है। इन प्रतिमाओं के गले, कमर और कान में भारी आभूषण चिपकाये हुए मिलते हैं। कभी-कभी चेहरे का आकार चिड़ियों जैसा होता है। कई खिलौने ऐसे भी मिले हैं जिनमें पेड़ की डाल पकड़े हुए शाल-भंजिका स्त्रियों को आकर्षक मुद्रा में दिखाया गया है। कामदेव की एक उल्लेखनीय मूर्ति मिली है, जिस पर उन्हें शूर्पक नाम के मछुवे को पददलित करते हुए दिखाया गया है। एक लोक कथा के अनुसार कुमदवती नाम एक राजकुमारी शूर्पक नाम मछुवे पर आसक्त हो गई। शूर्पक ने उसके प्रेम को ठुकरा दिया। अन्त में राजकन्या ने कामदेव की सहायता से उस पर विजय प्राप्त की। इसी कथा का आलेखन उक्त खिलौने में है।

मिट्टी की बनी हुई गुप्तकालीन अनेक मूर्तियां मिली हैं। इनका पिछला भाग बिलकुल सादा होता था, पर सामने देवी, देवताओं, यक्ष-गंधर्वों, पशु-पक्षियों आदि की मूर्तियां रहती थीं। मथुरा से प्राप्त कार्तिकेय की एक बड़ी मिट्टी की मूर्ति गुप्तकाल

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

की उल्लेखनीय प्रतिमा है। इसमें मयूर पर बैठे हुए देव-सेनापति कार्तिकेय का वीर भाव बड़ा प्रभावोत्पादक है। एक दूसरी मूर्ति पर आकर्षक मुद्रा में खड़ी हुई गंगा दिखाई गई है, जो हाथ में मंगल घट लिये है। नदी देवताओं का चित्रण लोक कला में बहुत प्रचलित हुआ, विशेष कर गंगा और यमुना का। गुप्त काल की अन्य बड़ी मूर्तियां मिली हैं, जिसमें एक सुन्दरी एक पुरुष के गले में दुपट्टा डालकर उसे खींच रही है। पुरुष के वेश को देखते हुए ऐसा प्रतीत होता है कि वह कोई विदूषक है। इस कला कृति को देखकर संस्कृत के विद्वान लेखक बाणभट्ट के उस वर्णन का स्मरण हो आता है जिसमें उन्होंने अन्तःपुर की स्त्रियों के विविध मनोविनोदों की चर्चा की है। एक स्थान पर उन्होंने लिखा है कि अन्तःपुर निवास की स्त्रियां बुड्ढे कंचुकियों के गले में वस्त्र डालकर उन्हें खिझाती थी।

प्रमुख भारतीय देवी के रूप में लक्ष्मी की मान्यता होने के कारण उसकी पूजा के अनेक विधान मिलते हैं। जैन कल्पसूत्र में लक्ष्मी का अभिषेक विस्तार से वर्णित है। उसे हिमालय के सरोवर में कमल-वाहिनी कहा गया है और दिग्गजों द्वारा जल से लक्ष्मी का अभिषेक करने की चर्चा की गई है। भूदेवी के रूप में लक्ष्मी का गजाभिषेक इस बात का प्रतीक है कि मेघ-देवता द्वारा जल वृष्टि करके भूमि को उर्वरा बनाया जाता है। जैन साहित्य में लक्ष्मी को सौभाग्य और समृद्धि की देवी के रूप में माना गया। अनेक स्थलों पर धन और सुख की प्राप्ति के लिए उसकी पूजा एवं अभिषेक की चर्चा मिलती है।

भारतीय मूर्ति कला और चित्रकला में लक्ष्मी का चित्रण बहुत प्राचीन काल से मिलता है। सांची और भरहुत की बौद्ध कला में पद्मस्थिता लक्ष्मी की अनेक सुन्दर प्रतिमाएं उपलब्ध हैं। कहीं पर लक्ष्मी को पुष्पित कमल वन के मध्य अवस्थित दिखाया गया है और कहीं उसे त्रिभंगी भाव में लीला-कमल हाथ में ग्रहण किये हुए प्रदर्शित किया गया है। बैठी या खड़ी हुई लक्ष्मी के अगल-बगल सूंड में मंगलघट लिए हुए हाथी अत्यन्त कलात्मक ढंग से, सांची, मथुरा, अमरावती आदि की कला में अंकित मिलते हैं। भारत के बाहर लंका, हिन्दचीन, हिंदेशिया, नेपाल, तिब्बत तथा मध्य एशिया में भी लक्ष्मी की अनेक कलात्मक मूर्तियां मिली हैं।

दुर्भाग्य तथा दरिद्र को दूर करने वाली श्री लक्ष्मी की कल्पना दीपलक्ष्मी रूप में की गई। दक्षिण भारत में दीपलक्ष्मी की विविध कलात्मक कृतियां मिलती हैं। ये प्रायः धातु, हाथीदांत या लकड़ी की निर्मित हैं। दीप को कभी देवी के हाथों में तो कभी सिर के ऊपर दिखाया जाता है। दीप लक्ष्मी की मूर्तियां आज भी लोक कला में पूजी जाती हैं।

राम और कृष्ण के चरित्र भी लोक-कथाओं का माध्यम बड़े रूप में बने। राम कथा को हम ईसवीं चौथी शती में नचना (जिला पन्ना) तथा देवगढ़ (जिला ललितपुर) के शिला-पट्टों में रूपायित पाते हैं। इसके बाद उत्तर तथा दक्षिण भारत ही नहीं, अपितु कंबोदिया, जावा, सुमात्रा आदि देशों की कथा में रामकथा का प्रमुख अंकन देखने को मिलता है। भारत और एशिया के अनेक देशों में रामकथा को नाट्य रूप में प्रदर्शित किया जाता है और यह परंपरा आज भी जीवित है।

रामलीला की तरह कृष्ण कथा के प्राचीन चित्रण उत्तर भारत में मथुरा, भंडोर (जिला जोधपुर), सूरतगढ़ (जिला बिकानेर), पहाड़पुर (बंगाली देश) तथा भुवनेश्वर की कला में मिले हैं।

उत्तर की तरह दक्षिण भारत में भी कृष्ण-लीला के अनेक चित्रण मिले है। ये प्रायः प्राचीन मंदिरों, गुफाओं आदि में उत्कीर्ण हैं। बादामी के पहाड़ी किले पर कृष्णलीला के विविध चित्र देखने को मिलते हैं। उनमें जन्म, पूतना-वध, शकट-भंजन, प्रलंब-धेनुक-अरिष्ट आदि का वध, कंस-वध आदि कितने ही दृश्य हैं। इन कृतियों का निर्माण काल ई. छठी-सातवीं शती है। प्राचीन भारत में नागों की पूजा भी विविध रूपों में प्रचलित थी। भगवान कृष्ण के भाई बलराम को शेषनाग का अवतार माना जाता है। विष्णु की शय्या अनन्त नागों की बनी हुई कही गयी है। जैन तीर्थंकर पार्श्वनाथ तथा सुपार्श्व के चिह्न नाग हैं। बौद्ध धर्म के अनुसार मुचुलिंद नामक एक नाग ने भगवान बुद्ध के ऊपर छाया की थी, नन्द और उपनन्द नागों ने स्नान कराया था। रामग्राम के स्तूप की रक्षा का कार्य भी नागों द्वारा संपन्न हुआ था। इस प्रकार भारत के सभी प्रमुख धर्मों में नागों का महत्वपूर्ण स्थान रहा और उनसे संबंधित अनेक लोक कथाएं मिलती हैं।

नागों की प्राचीन मूर्तियां पुरुषाकार तथा सर्पाकार दोनों रूपों में मिलती हैं। पहले प्रकार को पुरुष-विग्रह और दूसरे को सर्प-विग्रह नागकल कहते हैं। पहले में नाग-नागी को पुरुष-स्त्री के रूप में दिखाते हैं। उनके सिर पर पांच या सात फन रहते हैं। दूसरे प्रकार की मूर्तियों को प्रायः सन्तान की इच्छा रखने वाली स्त्रियां पूजती हैं। यह पूजा आज तक भारत के विभिन्न भागों में प्रचलित है।

बलराम की बहुसंख्यक प्रतिमाओं के अतिरिक्त मानवाकार रूपों में नागों की अन्य विविध मूर्तियां कला में मिली हैं, उत्तर-शुंगकालीन एक शिलापट्ट पर अतीतत्व नामक झील में स्नान करते हुए नागराज पूर्णक, उनके साथी, नाथ तथा कई नागियां दिखाई गई हैं। बौद्ध साहित्य में अनोतत्व झील वाली कथा मिलती है। नागराजी की एक ऐसी प्रतिमा मिली है जिसके शरीर से निकलती हुई पांच स्त्री मूर्तियां दिखाई गयी हैं। ये संभवतः पांच ज्ञानेन्द्रियों की सूचक है। दुर्भाग्य से चार लघु प्रतिमाओं के ऊपरी भाग खंडित हैं। पांचवीं जो पूर्ण है, अपने दोनों हाथों में प्रज्ज्वलित दीप लिए हुए है। बौद्ध प्रतिमाओं में भी नागों का विविध रूपों में चित्रण मिलता है। मथुरा की

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

एक कलाकृति पर नंद उपनन्द नामक नागों द्वारा बालक सिद्धार्थ का अभिषेक बड़े कलात्मक ढंग से दिखाया गया है। रामग्राम के स्तूप की रक्षा करते हुए नागों का चित्रण भी मथुरा कला में उपलब्ध है। जैन तीर्थंकर पार्श्वनाथ और सुपार्श्व की कई उल्लेखनीय प्रतिमाएं प्राप्त हुई हैं।

कलाकारों ने जलमानवों तथा समुद्र कन्याओं को अपनी कृतियों में स्थान दिया है। न्युनान, लघु एशिया तथा भारत की प्राचीन कला में नरसिंह, सपक्षसिंह, जलंभ, मानवभ्रकर आदि की तरह जलमानवों के भी चित्रण मिलते हैं। जलपरियों या समुद्र कन्याओं को इमारती पत्थरों में प्रायः अलंकरणों के रूप में दिखाया जाता था।

मथुरा से ई० पूर्व प्रथम शती का एक लंबा सिरदल प्राप्त हुआ है। उस पर एक ओर भगवान बुद्ध के मुख्य चिह्नों की पूजा दिखाई गई है। दूसरी ओर इन्द्र अपनी अप्सराओं आदि के साथ गुफा में स्थित बुद्ध के प्रति सम्मान प्रकट करने के लिए जा रहे हैं। सिरदल पर कमलपुष्पों से सुसज्जित (मंगलपट) भी दिखाए गए हैं। कोने पर सुमुखी कन्याओं का आलेखन है। उनका मुख से लेकर वक्ष तक का भाग स्त्री का है और शेष मछली का। उनका अंलकृत शृंगार दर्शनीय है। वे कर्णकुंडल, एकावली आदि आभूषण धारण किए हुए दिखाई गई हैं।

जैन तथा बौद्ध धर्म के साहित्य में भी अनेक रोचक कथाएं उपलब्ध हैं। इनमें अनेक चमत्कारिक घटनाओं को मनोरम ढंग से पिरोया गया है। तीर्थंकरों तथा बुद्ध की महानता को सिद्ध करने के लिए अनेक कथानक उपंवृहित किए गए हैं। उन्हें शिल्पियों ने अपनी कला में अमर किया। जैन धर्म के मूल तत्वों अहिंसा तथा अनेकांतवाद के प्रचारार्थ अनेक पुराण कथाओं की सृष्टि हुई। उन पर न केवल साहित्यिक कृतियां लिखी गई अपितु शिल्पियों, चित्रकारों, नाट्यकारों आदि ने भी उन रोचक कथाओं को अपनी कथाओं में स्थान दिया। गौतम बुद्ध के पूर्व-जन्मों की जातक कथाएं, भी इस दृष्टि से उल्लेखनीय हैं। उनमें से अनेक कथाएं प्राचीन मूर्तिकला तथा चित्र कला में अंकित हैं। यहां दो जातक कथाओं की चर्चा पर्याप्त होगी। पहली कथा उलूक जातक की है, जो इस प्रकार है--जंगल के पक्षियों ने एक बार मिलकर उल्लू को बहुमत से अपना राजा घोषित किया। उसे राजसिंहासन पर बैठाया गया। पर कौवे ने उल्लू का राजतिलक करने का विरोध किया। कौवे को यह आपत्ति थी कि उल्लू का चेहरा भयावना होने के कारण राजा के योग्य वह न था। कौवे की आपत्ति पर उल्लू उस पर झपटा। जान लेकर कौवा भागा और उल्लू उड़ते हुए उसका पीछा करने लगा। राज-सिंहासन खाली देखकर उस पर हंस को बिठा दिया गया और अंततः वहीं पक्षियों का राजा चुन लिया गया।

दूसरी कथा कच्छप जातक की इस प्रकार है: एक बार एक तालाब के सूखने पर उसके सभी जन्तु अन्य जलाशयों में चले गए। दुर्भाग्यवश एक कछुआ कहीं न जा सका। एक दिन उसने उड़ते हुए दो हंसों को देखा। उनसे प्रार्थना की वे उसका उद्धार करें तथा किसी जलाशय में उसे पहुंचा दें। हंसों को दया आई। वे एक मोटी लकड़ी ले आए। उन्होंने कछुओं से कहा कि लकड़ी के मध्य भाग को दृढ़ता से दांतों से दबा लो. उन्होंने कछुवे से यह आश्वासन भी लिया कि मार्ग में वह अपना मुंह नहीं खोलेगा। कछुवे ने यह स्वीकार कर लिया। हंस लकड़ी को अपनी चोचों से दबाकर कछुवे को ले उड़े। कुछ दूर जाने पर बच्चों ने शोर मचाया, कि देखो चिड़िया कछुवे को भगाए लिए जा रही है। यह सुनकर कछुवा आपे से बाहर हो गया। वह बोल उठा मैं उड़ा जा रहा हूं तो तुम लोगों का गला क्यों फटा जा रहा है। इतना कहना था कि कछुवा दम से भूमि पर गिर पड़ा और बच्चों ने डण्डों से उसकी खूब पिटाई की।

बोधगया, मथुरा, मल्हार आदि की लोक कथा में उक्त दोनों जातक कथाओं के मनोरंजक चित्रण उपलब्ध हैं।

मिथकों की बहुलता तथा साहित्य एवं लोक कला में उनके रोचक आलेखन से स्पष्ट है कि भारतीय संस्कृति में उनका विशेष ध्यान रखा है और लोक जीवन को प्रभावित करने में उनका योगदान महत्वपूर्ण रहा है। □

अभिमान, दुर्भावना, विषयाशा, ईर्ष्या, लोभ आदि दुर्गुणों को नाश करने के लिए ही शास्त्राभ्यास करके पाण्डित्य प्राप्त किया जाता है। यदि पण्डित होकर भी हृदय-भवन में ये दुर्गुण बने रहे तो पण्डित और मूर्ख में कोई भेद नहीं है, दोनों को समान ही जानना चाहिए। पण्डित, विद्वान् या विशेषज्ञ बनना है तो हृदय से अभिमानादि दुर्गुणों को हटा देना ही सर्वश्रेष्ठ है।

—राजेन्द्र सूरि

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org